0/2009-11

स्थापक : प्रेमचंद : 1930

हंस

नचेतना का प्रगतिशील कथा-मासिक

र्णांक-273 वर्ष: 23 अंक: 12 जुलाई, 2009

संपादक : राजेन्द्र यादव
कार्यकारी संपादक : संजीव
सांस्कृतिक प्रतिनिधि : अजित राय
बंध सहायक : वीना उनियाल
र्यालय सहायक : किशन राय, दुर्गा प्रसाद
खनऊ मुख्य प्रतिनिधि : राजेन्द्र प्रसाद जायसवाल

संपादकीय/व्यवस्थापकीय कार्यालय
अक्षर प्रकाशन प्रा. लि.,
2/36, अन्सारी रोड, दरियागंज,
नई दिल्ली -110002
दूरभाष: 23270377, 41050047
फैक्स नं. : **66326202**

Mail : editorhans@gmail.com

ूल्य : एक प्रति : 25 रुपए,
ार्षिक : 250 रुपए
संस्था और पुस्तकालय : 400 रुपए
आजीवन : 5000 रुपए
विदेशों में : 50 डॉलर,
सारे भुगतान मनीआर्डर/चैक/बैंक ड्राफ्ट द्वारा अक्षर प्रकाशन प्रा. लि. के नाम से किए जाएं.
कृपया दिल्ली से बाहर के चैक में बैंक कमीशन के 5/- रुपए अतिरिक्त जोड़ दें.

हंस/ अक्षर प्रकाशन प्रा. लि. से संबंधित सभी विवादास्पद मामले केवल दिल्ली न्यायालय के अधीन होंगे.

अंक में प्रकाशित सामग्री के पुनर्प्रकाशन के लिए लिखित अनुमति अनिवार्य है.

संपादक-प्रकाशक-मुद्रक: **राजेन्द्र यादव** द्वारा अक्षर प्रकाशन प्रा. लि., 2/36 अन्सारी रोड, दरियागंज, नई दिल्ली-110002 के लिए प्रकाशित तथा एम. पी. प्रिंटर्स (प्रो. भास्कर इन्डस्ट्रीज लि.) बी-220 फेज-II नोएडा गाजियाबाद (उ.प्र.) से मुद्रित.

शब्द संयोजन : **राकेश चौधरी**

जुलाई, 2009

इस अंक में

कहानियां
18. मुबारक पहला कदम : वैक्यूम : सरिता शर्मा
22. हैंगओवर : अमरीक सिंह दीप
30. तुम खुश रहो, हमारा ओ.के. है : सुषमा मुनीन्द्र
38. बर्ज़ख (खुफिया दुनिया) : मन्शा याद
42. वैनिला आइसक्रीम और चॉकलेट सॉस : अचला बंसल
50. कोई बात नहीं पापा : मनीषा तनेजा
52. परित्यक्त : शिवकुमार यादव
56. कीड़े : आनंद बहादुर
68. बुजरी : अरुण कुमार

मेरी-तेरी उसकी बात
2. यात्राएं : कहीं से शुरू होकर कहीं नहीं तक... : राजेन्द्र यादव

बात बोलेगी
95. यथातथ्य बनाम यथा अर्थ : संजीव

न हन्यते
14. जाना एक विस्मृत गुरु का : रामशरण जोशी
16. अपनी शर्तों पर जीने और लिखने में कामयाब... : परदेशीराम वर्मा

प्रसंग
45. दो हज़ार के टिकट पर एक करोड़ का राम : कुबेर दत्त
67. कैसी औरतें थीं वे... : शीला इन्द्र

कविताएं
48. विद्याभूषण, हरभगवान चावला, अरुणाराय
49. कुमुद, चंदन कुमार, फौजदार माली

जिन्होंने मुझे बिगाड़ा
62. पुस्तकें, जिन्होंने मुझे बिगाड़ा : वाई. वेद प्रकाश

परदा इधर : परदा उधर
64. शरियत का हौआ : शीबा असलम फहमी

परंपरा
61. दुष्यंत की परंपरा का आलोक : डॉ. नामवर सिंह

बीच बहस में
55. हिंदी के 'सैड अंकल्स' : विकास कुमार झा

कसौटी
76. जमीनी सचाई से दूर मीडिया : मुकेश कुमार

रेतघड़ी
78. संजीव झा का ध्रुपद गायन : अभिषेक कश्यप

लघुकथाएं
87. सुनील कुमार सिन्हा, योगेन्द्र दवे, 91. ज्ञानदेव मुकेश

ग़ज़लें
89. डॉ. रहमान मुसव्विर

निरुत्तर
47. भगवान की कृपा : स्वामी नित्यानंद

लेकिन दरवाज़ा
63. मौलवी वहीदुद्दीन सलीम : नारंग साकी

परख
80. आपका नहीं, आप सबका बंटी : साझा मातृत्व की इत्ती कहानियां : अनामिका
82. समर्पित और तटस्थ अंकन : विभास वर्मा
84. खांटी घरेलू औरत की कहानी : बलवंत कौर
86. समाज से उठती जातीय मानसिकता की दुर्गन्ध : रमेश प्रजापति
88. पिछड़ा वर्ग आंदोलन और सामाजिक परिवर्तन की वैचारिक पड़ताल : अनिल प्रकाश
90. अब सचमुच थमेगा नहीं विद्रोह : डॉ. सुमित्रा महरोल

समकालीन सृजन-संदर्भ
91. महादेवी वर्मा सृजन पीठ, रामगढ़ (नैनीताल) के विवाद : भारत भारद्वाज

आवरण : रोहित उमराव

रेखांकन : देवांशु, संदीप राशिनकर, राकेश प्रियदर्शी, सुधीर सागर, मेधा तिथि, वाजदा खान, राग तेलंग

अब सचमुच थमेगा नहीं विद्रोह

डॉ. सुमित्रा महरोल

पुस्तक	:	**'थमेगा नहीं विद्रोह'**
लेखक	:	**उमराव सिंह जाटव**
प्रकाशक	:	**वाणी प्रकाशन, 21-ए दरियागंज, नई दिल्ली-2**
मूल्य	:	**200/- रुपए (पेपरबैक)**

''थमेगा नहीं विद्रोह'' उपन्यास के लेखक उमराव सिंह जाटव जी ने उपन्यास में दरियापुर नामक स्थान के अनेकों पात्रों के माध्यम से दलितों वंचितों, शोषितों की यातनाओं, अपमानों, वर्जनाओं, विडंबनाओं के साथ-साथ उनके सपनों, आकांक्षाओं, उच्चतर मानवीय मूल्यों के प्रति उनकी आस्थाओं को तो अभिव्यक्त किया ही है, इसके अतिरिक्त बदलते परिदृश्य के अनुरूप दलितों में उत्पन्न हुए जागरण, संगठन, विरोध व विद्रोह को भी वाणी दी है.

उपन्यास व्यापक फलक पर लिखा गया है. पात्र बहुआयामी व्यक्तित्व के साथ-साथ अपने परिवेश, संस्कृति, विशिष्ट बोली-बानी, आचार-विचार को समग्रता में जीते हुए एक विशिष्ट काल-खंड का संपूर्ण लेखा-जोखा लिए हुए मूर्तिमान हैं. चावली, भागो, तुलाराम, मुंडा, देवीचरण, हुकमसिंह, चंदर, इंदर, सोनपाल, हमीद खाला इत्यादि कुछ इसी तरह के पात्र हैं. इनके चरित्र की सूक्ष्म रेखाओं के माध्यम से वर्गीय चरित्र को तो उभारा ही गया है परिवेश व संस्कृति भी अपनी झीनी घटा लिए सर्वत्र विद्यमान है. उपन्यास में कोई एक केंद्रीय पात्र और उसके साथ-साथ चलती गौण कथाएं नहीं हैं. कई पात्र जैसे भागो मुंडा, तुल्लाराम, चावली इत्यादि के विस्तृत जीवनवृत्त आए हैं. यह सभी पात्र एक दूसरे से असम्पृक्त हैं. एक साम्यता यह है कि यह सभी दलित हैं व अपने वर्ग विशेष के समस्त उजले-धुंधले पक्षों को साथ ले अपनी संस्कृति विशिष्ट बोली-बानी रीति-नीति, परिवेश समेत हमारे समक्ष आ खड़े हुए हैं. एक अन्य बात भी है जो इस उपन्यास को महत्वपूर्ण बनाती है, वह है पद दलित शोषित जाटव एवं शक्तिसम्पन्न गूजर और इनमें विभिन्न मुद्दों पर होने वाला संघर्ष. यह संघर्ष इस बात की ओर संकेत करता है कि अपनी तमाम सीमाओं, अक्षमताओं, समाज में अपनी अत्यंत हेय व दुर्बल स्थिति के उपरांत भी जाटव संगठित हो अपने अधिकारों के प्रति सचेत हो गए हैं और यह जानते हुए भी कि वह शक्ति में गूजरों से हीन हैं, अपने और अपने समुदाय के अधिकारों के लिए गूजरों से भिड़ जाते हैं व गूजरों को अहसास करा देते हैं कि वह अब जाटवों से मनमाना व्यवहार नहीं कर पाएंगे.

उपन्यास में जाटवों के कुएं पर गूजर शक्ति के बल पर आधिपत्य स्थापित कर लेते हैं–''गूजरों को अचानक भान हुआ कि जाटवों के पीने के जल की आपूर्ति से कहीं अधिक इस कुएं की आवश्यकता उन्हें है, उनके खेतों की प्यास बुझाने को.'' (पृ. 66) बीसियों गूजर लाठी बल्लभ लिए जाटवों के कुएं की घेराबंदी कर लेते हैं व पानी भरने आई पनिहारिनों को हड़काकर भगा देते हैं. जाटव बहुतेरी विनती चिरौरी करते हैं पर परिणाम वही ढाक के तीन पात. जाटवों के सम्मानित बुजुर्गों को भीषण शारीरिक यातनाएं दी जाती हैं, तब अनुभवी मथुरा जाटव ''ने यह पारित किया कि अब चाहे जो हो, मरें कि जिएं लेकिन कुआं पर जाटवों के पूर्ण स्वामित्व के अलावा अन्य कोई विचार भी आज से उनके मन में न हो.'' (पृ. 69) मथुरा अपने साथ कोई पांचेक जनों को ले ''बिलनसैर'' जिला मुख्यालय को प्रस्थान कर गया–''कचहरी में केस दायर कर दिया कि गूजरों ने जाटवों के दादालाई (पुरखों से प्राप्त स्वामित्व) कुआं पर न सिर्फ़ कब्जा कर लिया है बल्कि कुआं से पानी भी नहीं भरने दिया जा रहा है.'' (पृ. 71)

इस पर न्यायालय ने अगले आदेश तक, जब तक कि कोई निर्णय न हो जाए, गूजरों के द्वारा उसके प्रयोग पर रोक लगा दी और आदेश दिया कि तब तक यथास्थिति के अनुसार जाटवों को कुआं से पानी भरने का हक रहेगा.'' (पृ. 71)

जाटवों में ऐसी सामूहिक चेतना, ऐसा संगठन अभूतपूर्व है. अपने नैसर्गिक अधिकार के लिए न्यायालय तक जाना व अपना हक़ पाने के लिए संगठित हो लड़ने की चेतना अशिक्षित पददलित समाज के द्वारा किया जाना ही अपने आपमें प्रशंसनीय है. यह इस बात की मुनादी है कि अवर्ण अब सवर्णों के शोषण को चुपचाप बर्दाश्त नहीं करेंगे, विरोध करेंगे चाहे परिणाम कुछ भी हो. यह चेतना, यह साहस जागना ही किसी कौम के उत्थान की पहली सीढ़ी है.

जाटवों की कानूनी जीत पर गूजर तिलमिला जाते हैं जाटव पलटकर उन पर वार करें यह गूजरों के लिए अनहोनी से कम वारदात न थी. प्रतिशोध स्वरूप वह अपने खेतों पर 'जंगल पानी' के रूप में जाटवों के प्रयोग पर रोक लगा देते हैं. खेत उनके हैं, शौच के लिए जाटवों को चाहे तो प्रयोग करने दें चाहे तो नहीं. इस स्थिति में जाटव बड़ी बुद्धिमता का परिचय देते हैं–''गूजरों के पास खेत हैं पर उन खेतों तक पहुंचने के लिए रास्ता जाता है जटवाड़े से.'' (पृ. 74) यदि गूजर हमें खेतों का उपयोग जंगल पानी के लिए नहीं करने देंगे तो हम अपने रास्ते का उनके द्वारा प्रयोग नहीं होने देंगे. जाटव सिरों पर तवे बांधकर गूजरों के सामने खड़े हो जाते हैं. खूनी संघर्ष होता है, दोनों ओर तनाव व्याप्त हो जाता है व अंत में दोनों पक्षों में समझौता हो जाता है. गूजर समझ जाते हैं कि अब पहले की भांति जाटवों को दबाकर नहीं रखा जा सकता. उपन्यास में यह संदेश अनुस्यूत है कि दलितों में अब चेतना जागृत हो चुकी है, शोषण का न केवल प्रतिरोध करेंगे अपितु प्रतिकार लेने से भी

पीछे नहीं हटेंगे.

चावली का प्रसंग इस कारण महत्वपूर्ण है कि वाल्मीकि समाज में स्त्रियों की अत्यंत शोचनीय स्थिति को तो उसके माध्यम से आकलित किया ही जा सकता है. इसके अतिरिक्त समाज की एक अत्यंत घृणित, गर्हित, अमानवीय ''मैला ढोने की प्रथा'' को भिन्न-भिन्न दृष्टिकोणों से भिन्न-भिन्न पात्रों के माध्यम से देखने का प्रयास किया गया है. मेहतरानियों द्वारा अंजाम दी जाने वाली प्रथा का वर्णन लेखक ने इस प्रकार किया है–''घर के एक कोने में ही पाखाना के लिए एक घट्टी बना लेते थे. जजमान का पूरा कुनबा जबज़ी भर हग लेता, तब मेहतरानी आकर उस गंदगी को टीन के कनस्तरों में भरकर शहर से बाहर फेंक आती थी. कनस्तर का चलन भी बस बहुत दिनों तक पुराना नहीं था, अंग्रेज़ों के आने पर आरंभ हुआ, उससे पहले तो बॉस अथवा टहनियों के टोकरे में भरकर जब मेहतर चलता था तो गू उसमें से टपकता जाता था (पृ. 183)'' कितनी घृणास्पद, कितनी अमानवीय है यह प्रथा. चिंतनीय यह है कि आजादी के इतने वर्षों बाद भी यह हमारे समाज में आज भी विद्यमान है. सरकार एवं प्रबुद्ध समाज के द्वारा इसके उन्मूलन के व्यापक प्रयास किए गए हैं पर इन सबके उपरांत भी यह प्रथा आज भी हमारे समाज में जड़े जमाए हुए हैं.

यहां पर यह उल्लेखनीय है कि चावली की मां जैसे पात्र अज्ञानता, अशिक्षा, कुसंस्कार, कूपमंडूकताओं के चलते इस प्रथा के इतने आदि हो चुके हैं कि, ''उमर गुजर गई गू मूत कमाते, इसकी बास मेरे जीवन में इतनी समा गई है कि सुबह उठते ही सूंघने को ना मिले तो बहुत बेचैनी होती है. एक दो घर कमा लेती हूं तब जाकर चैन आता है.'' (पृ. 184)

स्थिति का एक पक्ष यह भी है. इस काम में रम चुके लोग इसके इतने अभ्यस्त हो चुके हैं कि विकल्प होने पर भी आसानी से इसे छोड़ना नहीं चाहते. गंदगी में रहते-रहते वह गंदगी और सफाई का भेद भूल चुके हैं.

दूसरी ओर चावली जैसे पात्र हैं जो इस कार्य से पलायन कर चुके हैं व इस घृणित व गर्हित काम का स्वप्न में भी स्मरण नहीं करना चाहते.

चावली के अतिरिक्त भागमली, कमलेश एवं अन्य स्त्री पात्रों के माध्यम से समाज में स्त्रियों की दोयम स्थिति का अंदाज़ लगाया जा सकता है. भागमली के माता-पिता बेटी के उत्तरदायित्व से किसी भी प्रकार मुक्त होने के बोध के चलते उसे तपेदिक के रोगी के साथ ब्याह देते हैं. पति संसर्ग के कारण भागमली को भी तपेदिक हो जाता है वह पति से भी पहले यमलोक पहुंच जाती है. अपूर्व सुंदरी कमलेश अपने पति के हाथों ही मौत के घाट उतार दी जाती है. गांव की अनेक स्त्रियों से अनैतिक संबंध रखने वाला उसका पति मुंडा उसका किसी अन्य से लगाव बर्दाश्त नहीं कर पाता व उसके प्रेमी समेत उसका काम तमाम कर देता है. मुंडा का भाई देवीचरन पहले तो मुंडा की जगह जेल जाता है व बाद में मृत्युदंड पाने पर मुंडा की जगह खुद फांसी चढ़ जाता है. यह भाई का भाई के प्रति अनन्य प्रेम ही था.

धर्म, झूठे दंभ, अहम्, दिखावे एवं परिस्थितियों के मकड़जाल में उलझे तुलाराम जाटव का प्रसंग अत्यंत रोचक और पठनीय है. पांच बीघे खेत का स्वामी तुलाराम मंदिर बनाने की बेतुकी सनक के चलते न केवल किसान से दिहाड़ी मजदूर बनने को विवश हो जाता है अपितु परिस्थितियों के चलते रातोंरात गांव छोड़कर भाग जाता है. इस प्रसंग में अनेक मतभेदों, वैमनस्यों एवं मनमुटावों के होते हुए भी जाटवों की एकता स्तुत्य है. गूजर जब एकजुट हो तुलाराम को मारने के लिए आते हैं तो तुलाराम की मूर्खतापूर्ण हरकतों को भूल कर जाटवों के चारों मुहल्ले आपसी मतभेद भूलकर उसकी रक्षा को दौड़ पड़ते हैं.

'थमेगा नहीं विद्रोह' में स्थानीय बोली बानी, संस्कृति एवं ग्रामीण परिवेश का जीवंत व चित्रात्मक वर्णन न केवल आंचलिकता का सा आभास देता है अपितु पाठक को आदि से अंत तक बांधे रखने में भी सफल रहा है.

❑

लघुकथा

उतरन

ज्ञानदेव मुकेश

बड़े साहब का चपरासी उनसे काफी हिल गया था. वह पिछले लगातार तीन अवसरों पर बड़े साहब के साथ-साथ पदस्थापन पाता आया था. बड़े साहब के मन में भी उसके प्रति नेह भर गया था. वे प्रेम में आकर अपने कपड़े-लत्ते उस चपरासी को दे दिया करते थे. चपरासी प्रेम का स्पष्ट अनुभव करता हुआ बड़े साहब की उतरन को पहनकर स्वयं को धन्य समझता. उसका कद ऊंचा हो जाता.

एक दिन चपरासी ने भी एक नई कमीज खरीदी और लजाते-सकुचाते बड़े साहब के हाथों में रखी. उसने कहा, ''साहब, इसे जरूर पहनिएगा. मुझे खुशी होगी.''

मगर साहब ने वह कमीज नहीं पहनी. एक दिन उनकी बेटी ने कहा, ''पापा, वह आपकी उतरी हुई कमीज पहन लेता है, मगर आप उसकी दी हुई नई कमीज भी क्यों नहीं पहनते?''

बेटी ने कई बार यही प्रश्न दुहराया तो एक दिन बड़े साहब ने वह कमीज अपने बदन पर डाल ली. आफिस में चपरासी ने यह देखा तो उसकी आंखें छलछला गईं. उसने यहां भी अपने लिए सम्मान का अनुभव किया. मगर बड़े साहब अंदर-ही-अंदर एक अजीब तरह की घुटन महसूस कर रहे थे.

शाम को अपने कमरे से बाहर निकलते समय उन्होंने देखा, चपरासी बिरादरी के कई लोग उन्हें कृतज्ञता भरी दृष्टि से देख रहे थे. मगर ऐसा देख बड़े साहब को लगा जैसे चपरासियों की नजरें अपमान के तीर हैं जो उन्हें अंदर तक बेंधते जा रहे हैं. घर पहुंचते ही बड़े साहब ने वह कमीज उतारी और उसके दो टुकड़े करके एक कोने में फेंक दी. उन्होंने तय कर लिया कि आगे से वह चपरासी को अपनी उतरन नहीं देंगे.

संपर्क : श्री आई.एन. मल्लिक का मकान, स्टेट बैंक के पास, शिवाजी कॉलोनी, पूर्णिया-854301 (बिहार)